इकाई 13 राजनीति और समाज*

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 राजनीति को परिभाषित करना

13.2.1 राजनीतिक व्यवस्था और इसके घटक

13.2.2 सत्ता की अवधारणा

13.3 राज्य राष्ट्र और समाज

13.4 भारतीय राष्ट्र राज्य का उद्‌भव

13.4.1 1858 से पूर्व राष्ट्रीय विचार की अनुपस्थिति

13.4.2 भारत में राष्ट्रवाद का विकास

13.5 स्वतंत्र भारत में राजनीति का स्वभाव

13.5.1 राजनीतिक स्तर की रणनीति

13.5.2 आर्थिक स्तर पर रणनीति

13.5.3 ताक़तें जो राष्ट्र निर्माण के प्रयासों को चुनौती देती हैं

13.6 राष्ट्रीय एकता

13.7 सारांश

13.8 संदर्भ

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के माध्यम से, आप निम्न कार्य कर सकेंगे:

- समाज में राजनीति और राजनीतिक व्यवस्था की अवधारणा को परिभाषित करना;
- राज्य राष्ट्र और समाज को परिभाषित करना और उनके बीच अंतर करना;
- भारतीय राष्ट्र राज्य के उद्‌भव का पता लगाना;
- राष्ट्र निर्माण के कार्य में शामिल रणनीति और चुनौतियों का वर्णन करना; और अंत में
- राष्ट्रीय एकता को परिभाषित करना और राष्ट्रीय एकता को चुनौती देने वाली ताकतों पर चर्चा करना।

13.1 प्रस्तावना

प्रजाति और नृजातीयता पर पिछली इकाई में आपने सीखा कि प्रजाति और नृजातीयता की अवधारणा और इसके विभिन्न सामाजिक और राजनीतिक अर्थ क्या हैं। यहाँ पर इस इकाई राजनीति और समाज में, हम आपको राजनीति का अर्थ और समाज के साथ इसके संबंध को समझाने का प्रयास करेंगे। कैसे राजनीतिक व्यवस्था मौजूद है औरकिस प्रकार यह राष्ट्र, राज्य और समाज की अवधारणाओं के बीच अंतर करती है। हमने भारत को एक राष्ट्र

*ई.एस.ओ.-12 भारत में समाज से डॉ. अर्चना सिंह द्वारा अनुकूलित।

के रूप में उभरने और राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में चुनौतियों का सामना करने के लिए समझाया है।

13.2 राजनीति को परिभाषित करना

राजनीति और समाज एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं। सभी समाजों में अपने सदस्यों को कुछ सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक मानदंडों के आधार पर व्यवस्थित करने के कुछ तरीके और साधन हैं। ये एक सामाजिक समूह में जन्म की कसौटी पर, या यौन श्रेणियों के आधार पर हो सकते हैं, जैसे कि सामान्य जनजातीय समाजों या जातीय समाजों में। सत्ता और अधिकार दो आयाम हैं जिनके आधार पर एक निश्चित प्रकार की राजनीति या राजनीतिक संबंध स्थापित होते हैं। सभी समाजों में मौजूद राजनीतिक संस्थान कुछ ऐसे रिश्तों के समूह पर आधारित होते हैं जो औपचारिक रूप से स्थापित होते हैं और जो राजनीतिक व्यवस्था का गठन करते हैं।

13.2.1 राजनीतिक व्यवस्था और इसके घटक

हम पाते हैं कि सामाजिक संबंधों को स्थापित करने के लिए लोग एक दूसरे के साथ अन्तःक्रिया करते हैं। ऐसा करने में, वे अक्सर अपने स्वार्थों का पीछा करते हैं। ये स्वार्थ कभी-कभी दूसरों के हितों के विपरीत भी चलते हैं जो समाज के हितों के लिए भी हैं। अपने हितों की पूर्ति के लिए लोग सत्ता के साधनों का उपयोग करते हैं और वे दूसरों के हितों को नियंत्रित करते हैं। यह स्थिति हमेशा संघर्ष की ओर ले जाती है। सामाजिक रिश्तों की एक व्यवस्थित व्यवस्था बनाए रखने के लिए, हमें संघर्ष को हल करने और लोगों की विविध गतिविधियों को समन्वित करने की आवश्यकता है। यह आमतौर पर सत्ता का प्रयोग करने और लोगों के व्यवहार पर कुछ प्रकार की बाधाएं डालने के द्वारा किया जाता है। जब सामाजिक संबंधों को सत्ता के आयाम के इर्दगिर्द आयोजित किया जाता है, तो हम कहते हैं कि अब हम सामाजिक संपर्क के सामान्य क्षेत्र से वर्तमान संबंधों के अधिक विशिष्ट क्षेत्र में चले जाते हैं। जब सत्ता संबंधों को व्यवस्थित और विशिष्ट कार्यों के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है, तो हम उन्हें एक राजनीतिक व्यवस्था के रूप में व्यक्त करते हैं। इस प्रकार, राजनीतिक व्यवस्थाएँ विकसित होती हैं, जब भी व्यक्ति और समूहों के बीच संबंध सत्ता और उसके विभिन्न अभिव्यक्तियों के व्यवहार के अनुसार व्यवस्थित होते हैं। ये साधारण समाजों में ग्रामीण बुजुर्गों की छिटपुट बैठकों से लेकर उच्च संगठित राज्यों तक हो सकते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर सत्ता के संचालन के विशिष्ट तरीके को समझने के लिए, हमें पहले सत्ता की धारणा और सामान्य रूप से राजनीतिक व्यवस्था की परिभाषा के संबंध को समझना उचित होगा। फिर हम इसके संबंध को राष्ट्र-राज्यों के विशिष्ट मामले के साथ भी देख सकते हैं।

13.2.2 सत्ता की अवधारणा

कुछ भी कभी करने या कुछ करवाने या किसी व्यक्ति या चीजों पर कार्य करने की क्षमता, शब्दकोष में दी गई सत्ता की परिभाषा है। इस तरह से देखें, तो सत्ता सामाजिक विज्ञान में एक मूल अवधारणा है। इसका तात्पर्य यह है कि कोई भी व्यक्ति, समूह या संगठन दूसरों के कार्यों को सहन करने के लिए प्राप्त करता है। इस अर्थ में, किसी को भी दूसरों की प्रतिक्रिया प्राप्त करने के लिए दिलचस्पी दिखाने की कोशिश करना एक सत्ता के रूप में वर्णित करना है। इसका मतलब यह है कि किसी के पास सामाजिक शक्ति है, जिसका उपयोग दूसरे व्यक्ति को वह करने के लिए किया जा सकता है जो वह चाहता है। यह सामाजिक शक्ति अनिवार्य रूप से अंतर-व्यक्तिगत संबंधों का एक पहलू है।

आइए देखें कि अगर हम राजनीतिक व्यवस्था को परिभाषित करने के लिए सामाजिक शक्ति के उपयोग को एक कसौटी के रूप में लेते हैं तो क्या होता है। इसका अर्थ यह होगा कि राजनीति के क्षेत्र में लगभग सभी मानवीय कार्य और अंतःक्रियाएं आएँगी। यह राजनीति की व्यापक संभावित परिभाषा होगी। राजनीतिक वैज्ञानिक इसे स्वीकार नहीं करते हैं। आइए देखते हैं कि उन्हें क्या कहना है।

राजनीतिक क्षेत्र का परिसीमनः राजनीतिक वैज्ञानिकों का तर्क है कि राजनीति का यह दृष्टिकोण इसे एक बहुत ही सामान्य और व्यापक विषय के स्तर तक कम कर देता है। इसलिए वे राजनीति के क्षेत्र का परिसीमन करते हैं और इस शब्द को 'राजनीति' आरक्षित करते हैं ताकि निजी क्षेत्र के बजाय सार्वजनिक क्षेत्र में सामाजिक शक्ति का उपयोग किया जा सके। इस प्रकार, उदाहरण के लिए, सत्ता संबंधों के संदर्भ में, परिवार के भीतर क्या होता है, राजनीति की श्रेणी में शामिल नहीं है। जब परिवार या उसके प्रतिनिधि दूसरों के विचारों और कार्यों को प्रभावित करके पड़ोस या गांव के मामलों में भाग लेते हैं, तो इसे राजनीति के रूप में वर्णित किया जाता है। इस तरह से देखा गया, सत्ता और इसकी विभिन्न अभिव्यक्तियाँ, जैसे, अधिकार, दमन, बल आदि राजनीति पर चर्चा करने के लिए मान्यता प्राप्त शब्द हैं। अधिकार की अवधारणाः राजनीतिक संबंधों के विशेष क्षेत्र को और अधिक परिसीमित करने के लिए, अधिकार की अवधारणा को लागू करना उपयोगी है। यह सत्ता के उपयोग की वैधता को संदर्भित करता है। जब सार्वजनिक क्षेत्र में सत्ता के रिश्ते नियमित हो जाते हैं, और इसलिए कुछ हद तक पूर्वानुमान योग्य होते हैं, तो वे भी उचित मानदंडों द्वारा बारीकी से निर्देशित होते हैं। लोग सत्ता का प्रयोग करने के लिए राजनीतिक अधिकार को स्वीकार करते हैं। इसका तात्पर्य राजनीतिक संस्थानों की स्वीकृति की एक स्पष्ट प्रणाली के अस्तित्व से है जिसके माध्यम से सत्ता का अधिकार या वैध उपयोग होता है। दूसरे शब्दों में, सत्ता अधिकार बन जाती है क्योंकि इस संबंध में शामिल तत्व आदेश जारी करने वालों की वैधता (अधिक या कम डिग्री) स्वीकार करते हैं। वे शारीरिक रूप से अनुपालन करने के लिए मजबूर नहीं हैं, वे स्वेच्छा से ऐसा करते हैं। इस तरह के व्यवस्थित राजनीतिक संबंधों को आमतौर पर राजनीतिक व्यवस्था के रूप में जाना जाता है।

राजनीति के अधिक प्रतिबंधित दृष्यः राजनीति के और भी अधिक प्रतिबंधित दृष्टिकोण को लेते हुए मैक्स वेबर जैसे समाजशास्त्री, व्यक्तियों के संगठन के लिए राजनीतिक संबंधों को परिसीमित करते हैं। उनके लिए, इस संगठन को क्षेत्रीय रूप से परिभाषित किया जाना है। दूसरे इसे भौतिक बल की परम स्वीकृति पर आधारित होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, मैक्स वेबर राज्य की अवधारणा का उल्लेख कर रहे हैं क्योंकि यह आधुनिक अर्थों में उभरा है। राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक संबंधों का वर्णन करने के उद्देश्य से, हमें राजनीति के इस प्रतिबंधित अर्थ पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है।

लेकिन समाजशास्त्रियों के रूप में, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि राजनीतिक संबंध उन समाजों में भी मौजूद हैं, जिनके पास राज्य जैसा विशिष्ट राजनीतिक संस्थान नहीं है। बड़ी संख्या में आदिवासी समाजों में, राजनीतिक अधिकार क्षेत्र पर आधारित नहीं है। उदाहरण के लिए, भारत में गुर्जर जैसे घुमंतू आदिवासी और यूरोप में रोमा या जिप्सी के पास अपने सदस्यों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए विवादित मामलों को निपटाने के लिए धर्मनिष्ठ सदस्यों के व्यवहार को विनियमित करने के लिए परिषदें हैं। फिर भी, उनके पास राज्य नहीं है।यहां, जैसा कि हम राजनीतिक संबंधों के साथ, राष्ट्रीय स्तर पर, एक ऐसे समाज में, जो एक पूर्ण विकसित राज्य है, हमें राज्य और राष्ट्र की अवधारणाओं पर चर्चा करने की आवश्यकता है। तभी हम भारत में राष्ट्र-राज्य के उभार की कहानी को आगे बढ़ा सकते हैं।

बोध प्रश्न 1

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दी गई जगह का उपयोग करें

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तरों की जांच करें

1) सामाजिक संबंधों की व्यवस्थित व्यवस्था के लिए दो आवश्यक आवश्यकताएं क्या हैं? चार पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) राजनीतिक व्यवस्था क्या है? पाँच पंक्तियों में उत्तर दें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) राजनीति के संदर्भ में शक्ति और सत्ता को परिभाषित करें। अपने उत्तर के लिए पाँच पंक्तियों का उपयोग करें।

.....

.....

.....

.....

.....

4) राजनीति के सीमित दृष्टिकोण को समझाए तो इसका क्या मतलब है? अपने उत्तर के लिए सात पंक्तियों का उपयोग करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

13.3 राज्य, राष्ट्र और समाज

आधुनिक काल में राजनीति पर चर्चा करते हुए, हम आम तौर पर राज्य, राष्ट्र और समाज की बात करते हैं। पश्चिमी यूरोपीय अनुभव के संदर्भ में, तीन शब्द कुछ हद तक स्पर्शी हैं। कई अन्य स्थलों के मामले में ऐसा नहीं है। इसलिए, यह आवश्यक है कि हम पहले इन शर्तों को परिभाषित करें।

i) **राज्य**ः राज्य एक राजनीतिक संघ है, जिसकी निम्नलिखित विशेषता है

   क) प्रादेशिक क्षेत्राधिकार,

   ख) कम या ज्यादा गैर-स्वैच्छिक सदस्यता

   ग) नियमों का एक समूह जो संविधान के माध्यम से अपने सदस्यों के अधिकारों को परिभाषित करता है और

   घ) अपने सदस्यों पर सत्ता की वैधता का दावा करता है।

   किसी राज्य के सदस्य को आमतौर पर नागरिक के रूप में संदर्भित किया जाता है। अधिक से अधिक बार, राज्य राष्ट्रीयता के साथ स्पर्शी है।

ii) **राष्ट्र**ः यह शब्द ऐसे लोगों के समूह को संदर्भित करता है, जिन्होंने संस्कृति, धर्म, भाषा और राज्य आदि की सामान्य पहचान के आधार पर एकजुटता विकसित की है। किसी भी समूह की राष्ट्रीय पहचान, जो खुद को इस तरह परिभाषित करती है, किसी भी संख्या के आधार पर हो सकती है। मानदंड, जैसे कि निवास स्थान, जातीय मूल, संस्कृति, धर्म, भाषा।

iii) **समाज**ः यह सामाजिक संगठन की सबसे व्यापक श्रेणी है जिसमें बड़ी संख्या में सामाजिक संस्थाएं शामिल हैं, जैसे नातेदारी, परिवार, अर्थव्यवस्था और राजनीति। इस अर्थ में, समाज शब्द का तात्पर्य सामाजिक संबंधों से है जो परस्पर जुड़े हुए हैं। एक दूसरे के साथ अन्तःक्रिया में लोग सामाजिक संबंध बनाते हैं। सामाजिक संबंधों के बार-बार और नियमित किए गएतरीके संस्थागत बन जाते हैं और इसलिए एक संबंधपरक अवधारणा के रूप में समाज में सामाजिक संस्थाओं का अध्ययन शामिल है।

दूसरी ओर, पर्याप्त अवधारणा के रूप में समाज एक सामान्य शब्द है जो राज्य या राष्ट्र को शामिल कर सकता है। यह दोनों में से या दोनों के साथ स्पर्शी भी हो सकता है। उदाहरण के लिए, जर्मनिक सोसायटी में पूर्वी जर्मनी, पश्चिम जर्मनी, ऑस्ट्रिया, इटली, स्विट्जरलैंड आदि के जर्मन भाषी लोग शामिल हो सकते हैं। एक और उदाहरण लें, हिंदू समाज में नेपाल, भारत, श्रीलंका और बांग्लादेश के नागरिक शामिल हो सकते हैं।

राज्य में इसी तरह के कई समाज शामिल हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, भारतीय राज्य में क्षेत्र, धर्म या भाषा के आधार पर विविध समाज शामिल हैं। आदिवासी समाज, जैसे कि भील, गोंड या नागा, भारतीय राज्य का अभिन्न अंग हैं।

राज्य, राष्ट्र और समाज की अवधारणाओं पर चर्चा करने के बाद, अब हम भारतीय समाज में राजनीति की प्रकृति की ओर मुड़ते हैं। इस प्रयोजन के लिए, अगले भाग में, हम भारतीय राष्ट्र राज्य के उद्भव पर चर्चा करेंगे। आप पूछ सकते हैं कि एक राष्ट्र राज्य क्या है। एक राष्ट्र राज्य एक राष्ट्र को नियंत्रित करने के लिए आयोजित एक राज्य को संदर्भित करता है, या शायद दो या अधिक निकट से संबंधित राष्ट्र। इस तरह के राष्ट्र का क्षेत्र राष्ट्रीय

सीमाओं से निर्धारित होता है और इसका कानून कम से कम कुछ समय में राष्ट्रीय रीति-रिवाजों और अपेक्षाओं से निर्धारित होता है। इस अर्थ में, भारत की एक राष्ट्र राज्य के रूप में भी चर्चा की जा सकती है और इसकी राष्ट्रीय राजनीति की प्रकृति पर चर्चा करने के लिए, हमें पहले उस तरीके को देखना चाहिए जिसमें भारतीय राष्ट्र का उदय हुआ।

बोध प्रश्न 2

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दी गई जगह का उपयोग करें

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तरों की जांच करें

1) समाज क्या है? अपने उत्तर के लिए लगभग पाँच पंक्तियों का उपयोग करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) राष्ट्र क्या है? अपने उत्तर के लिए लगभग तीन पंक्तियों का उपयोग करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) राज्य क्या है? अपने उत्तर के लिए लगभग तीन पंक्तियों का उपयोग करें।

.....

.....

.....

.....

.....

13.4 भारतीय राष्ट्र राज्य का उद्‌भव

भारतीय राष्ट्रीय राजनीति राष्ट्र-निर्माण के ऐतिहासिक अनुभव से प्रभावित है। इस अनुभव को एक सामान्य राष्ट्रीय पहचान में बड़ी संख्या में सामाजिक समूहों को एक साथ लाने के प्रयासों द्वारा चिह्नित किया गया है। स्वतंत्रता के बाद की अवधि में राष्ट्रीय राजनीति की प्रकृति को आसानी से समझा जा सकता है यदि हम ऐतिहासिक अनुभव के संक्षिप्त विवरण की रूपरेखा बनाते हैं। यहाँ, हम पहली बार भारत में 1858 से पहले की स्थिति का वर्णन करते हैं, जब राष्ट्र के विचार का सापेक्ष अभाव था। तब हम ब्रिटिश शासन की अवधि को देखते हैं जब भारत में राष्ट्रवाद का विकास हुआ था।

13.4.1 1858 से पूर्व राष्ट्रीय विचार की अनुपस्थिति

भारत में ब्रिटिश शासन के आगमन और 1858 में ब्रिटिश सत्ता (ताज) के संप्रभु शासन की स्थापना से पहले, भारत में बड़ी संख्या में छोटी और बड़ी राजनीतिक इकाइयों की विशेषता थी। इन इकाइयों ने प्रभुत्व पर अपना अधिकार बनाए रखने के लिए लगातार संघर्ष किया और अन्य राजनीतिक इकाइयों द्वारा हमलों से खुद को बचाया। हालाँकि मौर्य, गुप्त, चोल और पाण्ड्य जैसे कुछ बड़े पैमाने पर साम्राज्य थे, लेकिन जिस देश को हम भारत के रूप में जानते हैं, वह किसी भी शासन में राजनीतिक रूप से एकजुट नहीं था। इस प्रकार, जब तक अंग्रेजों ने भारत पर अपना आधिपत्य नहीं जमाया, तब तक हमारे पास कोई 'भारतीय राज्य' नहीं था।

हालाँकि, इसका मतलब यह नहीं है कि हमारी कोई भारतीय राष्ट्रीय पहचान नहीं थी। राजनीतिक रूप से एकीकृत क्षेत्र के बिना भी, कई कारकों ने मिलकर देश को एकता की पहचान दी। हालाँकि लोग गाँवों में अपना सारा जीवन व्यतीत करते थे, लेकिन ये गाँव उतने आत्मनिर्भर पृथक द्वीप नहीं थे जितने कि कुछ पश्चिमी विद्वानों द्वारा बनाए गए थे। लोग विवाह के लिए, तीर्थ यात्रा के लिए और व्यापार के लिए कई जगह जाते थे। धार्मिक मान्यताओं, व्यवहारों और संस्थानों ने लोगों को एक एकीकृत बल प्रदान किया (कोठारी 1986)। आदि शंकराचार्य द्वारा भारत के चार कोनों में धार्मिक अधिकरण के चार तीर्थों की स्थापना में एकता का एक उदाहरण देखा जा सकता है। इस प्रकार हम समानता के बारे में जागरूकता देख सकते हैं, हालांकि यह अस्पष्ट हो सकता है। यह जागरूकता दुनिया में किसी की भागीदारी से बढ़ी, जो कि किसी तत्काल भौगोलिक क्षेत्र से परे मौजूद थी। हालाँकि, इस चेतना का राजनीतिक क्षेत्र में रूपान्तरण नहीं हुआ और आज जिस अर्थ में हम इसकी बात करते हैं, उसमें हमारी कोई राष्ट्रीय पहचान नहीं है। अंग्रेजों के समक्ष जो समानता थी, उसकी पहचान शायद एक राष्ट्र के रूप में एक सांस्कृतिक पहचान के रूप में सबसे अच्छी तरह से व्यक्त की जा सकती है और एक राष्ट्र के रूप में राजनीतिक पहचान के रूप में नहीं।

13.4.2 भारत में राष्ट्रवाद का विकास

ब्रिटिश शासन की स्थापना, हालांकि इसने हमें गुलाम बना दिया, विरोधाभास ने हमारी मुक्ति की एक प्रक्रिया भी शुरू की। इसने हमें खुद को केवल एक सांस्कृतिक एकता के रूप में नहीं बल्कि राजनीतिक एकता के रूप उभरने का मौका दिया। इस देश से ब्रिटिश शासन को हटाने के लिए भारतीयों द्वारा किए गए प्रयासों में राष्ट्रवाद की वृद्धि देखी जा सकती है। यद्यपि हम हमेशा भाषा, धर्म, जातीय संरचना के संदर्भ में कई तरीकों से विभाजित थे, लेकिन दो कारकों ने भारतीय राष्ट्रवाद के उद्भव में सुविधा प्रदान की।

i) एक आम दुश्मन की उपस्थिति थी, यानी, ब्रिटिश शासन, और

ii) दूसरा एक सामान्य सांस्कृतिक पहचान का अस्तित्व था जो भारत के एकीकरण को एक राज्य के रूप में पेश करता था।

अंग्रेजों के खिलाफ विभिन्न संघर्षों, हिंसक, अहिंसक, संवैधानिक, अतिरिक्त-संवैधानिक ने भारत में विविध समूहों को एकजुट किया। इस प्रकार, नेहरू का बहुचर्चित वाक्यांश 'अनेकता में एकता' केवल एक शिष्टोक्ति (शिष्टोक्ति दोहराव से सामान्य बना एक वाक्यांश) नहीं था, बल्कि भारतीय अनुभव का एक तथ्यात्मक विवरण है। हमारा उद्देश्य यहाँ, भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के विवरण में नहीं जाना है। बल्कि हमें यह चर्चा करने की आवश्यकता है कि हमारा राष्ट्र राज्य कैसे अस्तित्व में आया। इस प्रयोजन के लिए हम अगले खंड में

वर्णन करेंगे कि कैसे आजादी के बाद के समय में भारत में एक आधुनिक राष्ट्र राज्य विकसित हुआ। हमें यह भी याद रखना चाहिए कि स्वतंत्रता प्राप्ति के समय राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया पूरी नहीं हुई थी। यह वास्तव में, एक सतत प्रक्रिया है और राजनीति की प्रकृति में परिलक्षित होती है। हम यह भी कह सकते हैं कि इस सांस्कृतिक पहचान को राजनीतिक राष्ट्रीय पहचान में बदलने की एक प्रक्रिया है। आइए अब हम स्वतंत्र भारत में राजनीति की प्रकृति को देखें ताकि हम यह पता लगा सकें कि यह रूपांतरित कैसे होता है।

सोचिये और करिये

महात्मा गांधी द्वारा लिखित पुस्तक जैसे 'माई एक्सपेरिमेंट्स विद ट्रुथ' या जवाहरलाल नेहरू की तरह 'द डिस्कवरी ऑफ इंडिया' या स्वतंत्रता आंदोलन पर स्वतंत्रता के लिए राष्ट्रीय आंदोलन के किसी अन्य नेता द्वारा लिखा हुआ पुस्तक पढ़ें। इस बारे में देखें कि लेखक इसके बारे में क्या कहना है

क) स्वतंत्रता के लिए भारतीय नेताओं के दृष्टिकोण के प्रति अंग्रेजों का रवैया

ख) स्वतंत्रता संग्राम में हाथ मिलाने वाले लोग (विभिन्न क्षेत्रों, जातियों, वर्गों और धर्मों के पुरुष/महिलाएं)

ग) महत्वपूर्ण घटनाएँ जिन्होंने स्वतंत्रता के लिए संघर्षों को चिह्नित किया

उपरोक्त बिंदुओं पर दो-पृष्ठ का नोट बनाएं और यदि संभव हो, तो अध्ययन केंद्र में अन्य छात्रों के नोट्स के साथ चर्चा करें ।

13.5 स्वतंत्र भारत में राजनीति का स्वभाव

स्वाधीनता आंदोलन का प्रमुख कार्य केवल ब्रिटिश शासन से राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करना नहीं था, बल्कि एक आधुनिक राष्ट्र राज्य का विकास करना भी था। हम कह सकते हैं कि इस दिशा में कुछ निश्चित कदम राजनीतिक स्तर पर उठाए गए थे जबकि अन्य आर्थिक स्तर पर थे। हम भारत में राष्ट्र निर्माण के लिए दोनों तरह की रणनीतियों पर चर्चा कर सकते हैं।

13.5.1 राजनीतिक स्तर पर रणनीति

राजनीतिक संगठन, जो भारत में राष्ट्र-निर्माण की गतिविधि कर रहा था, मुख्य रूप से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी थी। इस राजनीतिक दल में कुछ मामलों में जनसंख्या और कार्यकर्ताओं के विभिन्न वर्ग शामिल थे, कुछ मामलों में राजनीतिक विचारधारा के विपरीत भी थे। कांग्रेस पार्टी के सदस्य एक तरफ तथाकथित अछूतों से समाज के विभिन्न तबके के थे और दूसरी तरफ ब्राह्मण और ठाकुर। ऐसे लोग थे जो मार्क्सवाद और कुछ अन्य लोग थे जो 'हिंदू राष्ट्र' चाहते थे और फिर भी अन्य जो इस्लामिक राष्ट्रवाद को बढ़ावा देना चाहते थे। ऐसी विविधता आकस्मिक नहीं थी। पार्टी के नेताओं को शहरी पेशेवर वर्गों से तैयार किया गया था। वे आश्वस्त थे कि राष्ट्र-निर्माण राजनीतिक स्वतंत्रता के रूप में महत्वपूर्ण था। इसलिए उनकी राजनीतिक गतिविधि का प्रमुख उद्देश्य अधिक से अधिक विविध समूहों को एक साथ लाना था। यही विषय भारत की स्वतंत्रता के बाद की राजनीति में भी दिखाई देता है।

संविधान: 1950 में अपनाया गया भारत का संविधान, राष्ट्र-निर्माण का पहला प्रयास था। हमारे पास एक लिखित संविधान है, जो एक व्यापक दस्तावेज है। यह सरकार की नींव या डिजाइन प्रदान करता है। आइए हम देखें कि यह डिज़ाइन क्या है।

भारत में संघीय सरकार है। भारत में एक संघीय सरकार का अर्थ है कि केंद्र और राज्यों के बीच अधिकार विभाजित है। संविधान ने केंद्र और राज्यों दोनों में सरकार की संसदीय प्रणाली स्थापित की है। 'संसद' शब्द के विभिन्न अर्थ हैं, महत्वपूर्ण यह है कि यह लोगों के प्रतिनिधियों की एक सभा है और यह चर्चा के लिए एकत्रित व्यक्तियों का निकाय है। हमारे संदर्भ में, संसद सरकार के विधायी अंग को संदर्भित करती है। राष्ट्रपति देश का संवैधानिक प्रमुख होता है और प्रधान मंत्री की अध्यक्षता वाला मंत्री परिषद होता है। प्रधानमंत्री कार्यपालिका का प्रमुख होता है जो लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होता है। संसद में राष्ट्रपति और दो सदन होते हैं, अर्थात् राज्यों की परिषद (राज्य सभा) और लोगों का सदन (लोकसभा)।

राज्यों में, मंत्रिपरिषद का नेतृत्व 'मुख्यमंत्री' करता है, जो विधान सभा के प्रति उत्तरदायी होता है। हर राज्य में एक विधायिका होती है। कुछ राज्यों में एक सदन है जबकि अन्य में दो हैं। जहाँ एक सदन होता है, उसे विधान सभाके रूप में जाना जाता है और जहाँ दो सदन होते हैं, एक को विधान परिषद कहा जाता है और दूसरे को विधान सभा के रूप में जाना जाता है। भारत एक संसदीय लोकतंत्र है और इसका मतलब है कि सरकार जनता की राय से ली गई है। इस पर चर्चा के माध्यम से राजनीतिक दलों एवं बहुमत से शासन करने वाली और एक जिम्मेदार सरकार की आवश्यकता होती है। चित्र 13.1 भारतीय राष्ट्रीय राजनीति के विभिन्न घटकों को दर्शाता है।

एक संयुक्त राष्ट्र राज्य के निर्माण के माध्यम से भारत का संविधान भी भारतीय नागरिकों के कुछ "मौलिक कर्तव्यों" के अलावा अन्य चीजों के लिए भी उत्तरदायी है। उनमें से कुछ हैं (क) संविधान का पालन करना और उसके आदर्षों और संस्थानों का सम्मान करना जैसे, राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रीय गान, (ख) भारत के सभी लोगों के बीच सद्भाव और सामान्य भाईचारे की भावना को बढ़ावा देना, (ग) प्राकृतिक वातावरण की रक्षा करना, (घ) वैज्ञानिक स्वभाव, मानववाद और जांच और सुधार की भावना को विकसित करना,(ङ) हमारी समग्र संस्कृति की समृद्ध विरासत और मूल्य संरक्षित करना । हमारा संविधान न केवल नागरिकों को मौलिक अधिकार प्रदान करता है, बल्कि नागरिकों को आवश्यक आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक लाभ प्रदान करने के लिए राज्य को निर्देश भी देता है। इसका श्रेय स्वतंत्र भारत के शुरुआती चरण के नेताओं को जाता है, जो भारतीय राजनीति के संभावित विघटन के प्रति संवेदनशील थे। हमारे राष्ट्रीय नेताओं का मानना था कि भारत का संविधान लोगों को एकजुट राष्ट्र में एकीकृत करने में मदद करेगा।

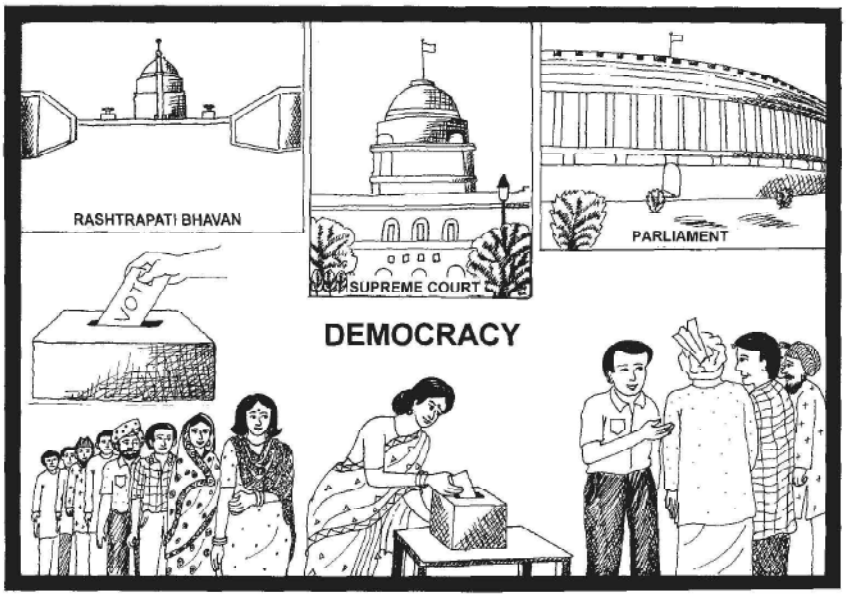

चित्र 13.1 : भारतीय राजनीति

समाजवादी प्रतिमानः समाज में व्याप्त असमानताओं को रोकने या कम करने के लिए समाज के समाजवादी स्वरूप को अपनाने तथा राष्ट्र निर्माण की दिशा में भारतीय राजनीति का एक और प्रयास किया गया। इससे विभाजनकारी प्रवृतियों को रोकने में भी मदद मिली। अनुसूचित जातियों, आदिवासियों, पिछड़े वर्गों, अन्य पिछड़ी जातियों और धार्मिक अल्पसंख्यकों को विशेष विशेषाधिकार प्रदान करके जनसंख्या के अधिक से अधिक वर्गों को शामिल किया गया।

प्रारंभिक चरण की एक उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि राजनीतिक सत्ता के लिए संघर्ष के बावजूद, राजनीतिक दलों को राजनीति के दबाव पर कोई बड़ा असंतोष नहीं था। जोर आबादी के विभिन्न तत्वों को एक साथ रखने और राष्ट्रीय राजनीति की मुख्यधारा में शामिल बहिष्कृत श्रेणियों को शामिल करने पर था।

आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया अभी पूरी नहीं हुई है। यह एक कारण है कि हम इस प्रक्रिया के बारे में अंतिम रूप से ज्यादा कुछ नहीं कह सकते हैं और नहीं कहना चाहिए। इसके बजाय, हमें अब आर्थिक स्तर पर राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया की ओर मुड़ना चाहिए।

बोध प्रश्न 3

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दी गई जगह का उपयोग करें।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तरों की जांच करें।

1) भारतीय राष्ट्रवाद के उद्भव में मदद करने वाले दो कारक क्या हैं? चार पंक्तियों में जवाब दें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) राजनीतिक स्तर पर राष्ट्र-निर्माण के प्रयासों को रेखांकित करें? अपने उत्तर के लिए चार पंक्तियों का उपयोग करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) बताएं कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत। प्रत्येक कथन के विरुद्ध सत्य/असत्य के लिए T या F एक चिह्न अंकित करें।

क) स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी के सदस्य मुख्य रूप से एक जाति से आये थे।

ख) एक संघीय सरकार यह दर्शाती है कि अधिकार केंद्र और राज्यों के बीच विभाजित है।

ग) भारत एक संसदीय लोकतंत्र है।

घ) संसद में राष्ट्रपति, लोकसभा और विधानसभाके दो सदन होते हैं।

13.5.2 आर्थिक स्तर पर रणनीति

राजनीतिक नेतृत्व द्वारा उठाया गया दूसरा बड़ा कदम देश का आर्थिक पुनरुत्थान था। कोई भी राजनीतिक शासन वैधता हासिल करता है जब वह लोगों की जरूरतों को पूरा कर सकता है। बदले में लोगों की संतुष्टि वितरित की जाने वाली वस्तुओं की उपलब्धता पर निर्भर करती है। इसलिए भारतीय राज्य के लिए पहला काम अर्थव्यवस्था का निर्माण करना था। यह उस समय भारतीय अर्थव्यवस्था के खराब आकार की दृष्टि से अधिक था। ब्रिटिशों की औपनिवेशिक नीतियां काफी हद तक भारत में उपलब्ध कच्चे माल के शोषण पर आधारित थीं, जिन्हें ब्रिटेन में उद्योग द्वारा इस्तेमाल किया जाता था। भारत को उनके तैयार माल के लिए बाजार की जगह के रूप में इस्तेमाल किया गया था। नीति का परिणाम यह हुआ कि देश में उद्योग का विकास नहीं हुआ। अंग्रेजी शासन के दौरान जो थोड़ा सा औद्योगीकरण हुआ, वह अंतरराष्ट्रीय राजनीति में इसके महत्व के कारण था। इससे देश के आर्थिक विकास में मदद नहीं मिली। इस प्रकार, यह अपरिहार्य था कि स्वतंत्रता के बाद, अर्थव्यवस्था को संषोधित करने के लिए निश्चित कदम उठाए गए थे। आर्थिक गतिविधि को विनियमित करने के लिए पंचवर्षीय योजनाओं का गठन एक ऐसा कदम था। इस उद्देश्य के लिए भारत सरकार ने योजना आयोग की स्थापना की।

नियोजन प्रक्रिया केवल एक आर्थिक गतिविधि नहीं है। यह एक राजनीतिक गतिविधि भी है। योजना आयोग न केवल यह तय करता है कि किस क्षेत्र को कितना उत्पादन करना है, यह विभिन्न राज्यों को परियोजनाओं का आवंटन भी करता है। यहीं पर राजनीतिक फैसले लेने पड़ते हैं। एक ठोस उदाहरण लेते हैं। मान लीजिए कि सरकार स्टील संयंत्र (प्लांट) स्थापित करने का फैसला करती है। यह न केवल एक इस्पात संयंत्र के स्थान की आर्थिक व्यवहार्यता के संदर्भ में है कि एक निर्णय किया जाता है। आयोग आर्थिक दृष्टि से लागत और लाभों को ध्यान में रखता है और यह उद्योगों के स्थान पर संभावित (क्षतिपूर्ति) ऑफसेट क्षेत्रीय असंतुलन के संदर्भ में निर्णय पर भी विचार करता है। इसी तरह, विभिन्न हित समूहों के बीच संतुलन बनाए रखना पड़ता है, जो अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के आसपास उभरा है। इस उद्देश्य के लिए, विद्युत शक्ति के उपयोग का सरल उदाहरण लें। उद्योग के लिए कितनी बिजली उपलब्ध होनी चाहिए क्योंकि कृषि एक राजनीतिक निर्णय है। आर्थिक क्षेत्र में, जैसा कि एक राजनीतिक क्षेत्र में, राष्ट्रीय राजनीति ने विभिन्न हितों को समेटने की नीति का पालन किया है और इस तरह से सतही स्तर पर संघर्ष से बचाव किया।

भारतीय राष्ट्र राज्य ने न केवल वितरण के लिए सामान उपलब्ध कराने पर ध्यान केंद्रित किया, बल्कि इसने वितरणात्मक न्याय के मार्ग पर चलने का भी निर्णय लिया। वितरणात्मक न्याय सभी लोगों के बीच वस्तुओं और सेवाओं का उचित और समान वितरण प्राप्त करने को संदर्भित करता है। वितरणात्मक न्याय के इरादे भारत में समाज के एक समाजवादी पैटर्न को अपनाने के लिए स्पष्ट हैं। समाज का एक समाजवादी पैटर्न यह दर्शाता है कि लोगों को समान अवसर और समान अधिकार प्राप्त हैं। एक प्रशासनिक वसीयत के रूप में राज्य व्यक्तियों को उनके अधिकारों की गारंटी देता है। यह लोगों के कल्याण के लिए सामान और सेवाओं को समान और निष्पक्ष रूप से वितरित करता है। यह नियंत्रण की

कठोर व्यवस्थाओं के उन्मूलन के लिए भी प्रयास करता है। उदाहरण के लिए, भारत में निजी संपत्ति इजाजत है, लेकिन अभी तक केवल उस मालिक के नियंत्रण की व्यवस्था की राशि पर नहीं है जो दूसरे के पास नहीं है। हम कई सामाजिक विधानों, जैसे औद्योगिक विवाद अधिनियम, जो औद्योगिक श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा करते हैं, या, अस्पृश्यता अपराध अधिनियम, जो भेदभाव से अछूत जातियों की रक्षा करते हैं या हिंदू विवाह अधिनियम, जैसे कई सामाजिक विधानों में न्याय का उदाहरण पा सकते हैं। हिंदू महिलाओं को अनुदान का अधिकार। इस प्रकार हमारे राष्ट्र-निर्माण के प्रयासों में न केवल विकास के लक्ष्य शामिल हैं, बल्कि समानता और सामाजिक न्याय भी शामिल हैं। आर्थिक स्तर पर रणनीति के संदर्भ में नवीनतम अर्थव्यवस्था के उदारीकरण की नई आर्थिक नीति को अपनाया है। इस चरण के बारे में आप पहले से ही इकाई 12 में पढ़ चुके हैं और इसलिए अब हम उन कारकों को देखने के लिए आगे बढ़ेंगे, जिन्होंने राष्ट्र निर्माण के हमारे प्रयासों को चुनौती दी है।

13.5.3 राष्ट्र निर्माण के प्रयासों को चुनौती देने वाली शक्तियाँ

अंतरसंबंधित कारकों के एक मेजबान ने समानता और सामाजिक न्याय के लक्ष्यों को प्राप्त करने के प्रयासों को बाधित किया है और साथ ही एक राष्ट्र राज्य का निर्माण किया है। हम कम से कम तीन मुख्य ताकतों को देख सकते हैं।

i) भारतीय समाज का गठन करने वाले समूहों की विविधता

ii) क्षेत्रीय और सांस्कृतिक पहचान

iii) जातिवाद।

आइए हम इन ताकतों में से प्रत्येक पर एक संक्षिप्त नज़र डालें।

i) **भारतीय समाज में समूहों की विविधताः** भारत एक विषम समाज है। यह कई विविध समूहों से बना है। भारतीय राष्ट्र राज्य के लिए पहला संभावित खतरा इस बहुलता में है। भारतीय समाज धर्म, जाति, भाषा और जातीय मूल के संदर्भ में विभाजित था। ब्रिटिश एक समूह को दूसरे के खिलाफ खड़ा करने की नीति का अनुसरण करके कुछ समूहों को नियंत्रित करने में सक्षम थे। लेकिन विभाजनकारी प्रवृत्तियाँ राष्ट्रवादी आंदोलन के दौरान भी तेजी से प्रकट हुईं जब विभिन्न समूह स्पष्ट रूप से भारत से ब्रिटिश शासन को हटाने के लिए एकजुट हुए। भारत में भारतीय राष्ट्रीय नेताओं के सामने अब भी एक और गंभीर चुनौती यह है कि किस तरह से अलग-अलग समूहों के हितों को एकीकृत किया जाए। उनमें से प्रत्येक की अपनी विशिष्ट आकांक्षाएं, इतिहास और जीने का तरीका है। परस्पर विरोधी समूहों के बीच टकराव को कम करने का प्रयास हमेशा सफल नहीं होता है। जैसा कि हमने पहले ही देखा है, समाज की एक समतावादी मॉडल को अपनाना एक महत्वपूर्ण रणनीति है जिसमें विभाजनकारी प्रवृत्तियाँ शामिल हैं। यह निश्चित रूप से आवश्यक है कि इन विभाजनों को राष्ट्र राज्य को धमकी देने की अनुमति नहीं है।

ii) **क्षेत्रीय और सांस्कृतिक पहचानः** राष्ट्र-निर्माण के लक्ष्य को भी क्षेत्रवाद से एक खतरे का सामना करना पड़ा है। हम पाते हैं कि हमारे देश में राष्ट्रीय राजनीति अभी भी क्षेत्रीय राष्ट्रीयताओं के उभरने से चिह्नित है। यह भाषाई आधार पर राज्यों के गठन में काफी स्पष्ट है। यह कुछ क्षेत्रीय पहचानों जैसे गोरखालैंड के लिए गोरखा और कुछ आदिवासियों द्वारा नवंबर 2000 से पहले एक अलग झारखंड राज्य द्वारा मांगों में भी स्पष्ट है। लेकिन ऐसे उदाहरण हैं कि भारत सरकार ने अलग राज्य के लिए इस तरह

की मांगों को स्वीकार किया। झारखंड मुक्ति मोर्चा द्वारा एक अलग राज्य के लिए आंदोलन की शुरुआत 1995 में झारखंड क्षेत्र स्वायत्त परिषद और आखिरकार नवंबर 2000 (भारत 2003) में एक पूर्ण राज्य स्थापित करने के लिए हुई।

आपको इसका मतलब यह नहीं निकालना चाहिए कि क्षेत्रीय पहचान पर जोर नहीं दिया जाना चाहिए। कुछ लोग यह तर्क देना पसंद कर सकते हैं कि क्षेत्रीयता अच्छी तरह से नहीं शुरू होती है, यह देश के राजनीतिक विघटन को नुकसान पहुँचाती है। लेकिन जैसा कि राष्ट्र ने इस तरह की समस्याओं का सामना किया है, सुलह की प्रक्रिया ने अपनी राजनीति को अपने वर्ग के भीतर क्षेत्रीयता को समायोजित करने की क्षमता दी है। सामंजस्य की राजनीति एक राष्ट्रीय ढांचे में विभिन्न समूहों के विविध हितों का सामंजस्य स्थापित करती है।

राष्ट्र राज्य के समेकन के शुरुआती लाभ के बावजूद, विविध सांस्कृतिक पहचानों ने खुद को जोर दिया। इसका एक उदाहरण दक्षिणी राज्यों में राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी का विरोध है। एक अन्य उदाहरण राज्यों के पुनर्गठन की मांग है। फिर भी एक और उदाहरण उनके सदस्यों के जीवन को विनियमित करने के उनके अधिकार के धार्मिक अल्पसंख्यकों द्वारा जोर है।

वास्तव में, राष्ट्रीय स्तर की राजनीति ने क्षेत्रीय और सांस्कृतिक पहचान के अस्तित्व को मान्यता दी है और केंद्र सरकार ने कानूनी प्रतिबंध भी प्रदान किए हैं। भारत के संविधान ने 1992 तक पंद्रह राष्ट्रीय भाषाओं को मान्यता दी। 1992 में एक संवैधानिक संषोधन (71 वें संषोधन) के माध्यम से आठवीं अनुसूची में तीन और भाषाओं को जोड़ा गया और राष्ट्रीय भाषाओं की सूची को 18 बना दिया गया। 2003 तक संविधान की आठवीं अनुसूची (भारत 2003)में 8 राष्ट्रीय भाषाएँ शामिल हैं। । यह प्रत्येक राज्य को क्षेत्रीय भाषा में अपने प्रशासन को चलाने की अनुमति देता है। यह अल्पसंख्यकों की धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियों में हस्तक्षेप नहीं करता है। कुछ लोगों के लिए यह अल्पसंख्यकों को विशेष सुरक्षा प्रदान करने के लिए प्रकट हो सकता है। इस विचार को रखने वाले लोगों की संख्या बहुत कम नहीं है। लेकिन फिर अन्य लोग भी हैं जो अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा को राष्ट्र के लिए एक प्रमुख लाभ मानते हैं। यह राष्ट्र राज्य को एकजुट रखता है और एक राजनीतिक एकता बनाता है।

iii) **जातिवादः** राष्ट्रीय राजनीति में जातिवाद के मुद्दे पर एक साथ कई लोगों, सार्वजनिक व्यक्तियों, विद्वानों और आम लोगों द्वारा बार-बार चर्चा की गई है। जाति भारतीय समाज की अति विशिष्ट संस्थाओं में से एक है। राजनीतिक क्षेत्र में इसकी भूमिका हालिया मूल की है। यह व्यापक रूप से देखा गया है कि जाति राजनीतिक अभिव्यक्ति के लिए प्रमुख आधार बन गई है। यह मुख्य रूप से है क्योंकि जाति लोगों को एक साथ लाने के लिए तंत्र प्रदान करती है। यह एक सफल लोकतांत्रिक राज्य की आवश्यकता भी है। जाति की संस्था का राजनीतिकरण करके, भारत में राजनीतिक प्रक्रिया ने एक अद्वितीय चरित्र ग्रहण किया है। भारत में राजनीतिक दलों का गठन जातिगत गठबंधनों के आधार पर होता है और भारतीय मतदाताओं के मतदान व्यवहार को जातिगत पहचान के संदर्भ में वर्णित किया जा सकता है।

जैसा कि जातिवाद को एक सामाजिक बुराई माना जाता है और जातिवादी विचारधारा समाजवादी समाज के समतावादी मॉडल के साथ अच्छी तरह से नहीं चलती है, राष्ट्रीय राजनीति में जाति की भूमिका को एक आवश्यक बुराई के रूप में देखा जाता है। इसे एक कारक के रूप में देखा जाता है जो राष्ट्र निर्माण के कार्य को चुनौती देता है। लोगों को

एक साथ आने के लिए वैकल्पिक आधार के अभाव में सभी समान हैं, भारतीय राष्ट्रीय राजनीति में जाति निर्णायक भूमिका निभाती है।

अब तक हमने जो चर्चा की है, उससे यह स्पष्ट होता है कि एक राष्ट्र राज्य के निर्माण का लक्ष्य एक आसान कार्य नहीं है। एक बढ़ती अनुभूति यह है कि राष्ट्रीय एकीकरण एक राजनीतिक पहचान प्राप्त करने की कुंजी है। हम अगले भाग में राष्ट्रीय एकीकरण की अवधारणा पर चर्चा करेंगे।

बोध प्रश्न 1

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दी गई जगह का उपयोग करें

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तरों की जांच करें

1) राष्ट्र राज्य का निर्माण करने के लिए आर्थिक स्तर पर क्या रणनीति थी? अपने उत्तर के लिए पाँच पंक्तियों का उपयोग करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) वे तीन मुख्य ताकतें क्या हैं, जो राष्ट्र निर्माण के प्रयासों को चुनौती देती हैं? अपने उत्तर के लिए दो पंक्तियों का उपयोग करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) बताएं कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत। प्रत्येक कथन के विरुद्ध सत्य/असत्य के लिए T या F के लिए एक चिह्न अंकित करें।

क) सुलह की राजनीति में राष्ट्रीय ढांचे में विभिन्न समूहों के विविध हितों के बीच सामंजस्य स्थापित करने के प्रयास शामिल हैं।

ख) भारत में प्रत्येक राज्य को अपने प्रशासन को अपनी क्षेत्रीय भाषा में ले जाने का अधिकार नहीं है।

ग) राजनीतिक अभिव्यक्ति के लिए जाति एक महत्वपूर्ण आधार है।

13.6 राष्ट्रीय एकता

राष्ट्रीय एकता राष्ट्रीय सामाजिक प्रणाली के विभिन्न भागों को एक समग्र में विकसित करने की एक प्रक्रिया है। एक एकीकृत समाज में, सामाजिक संस्थाओं और उनसे जुड़े मूल्यों में उच्च स्तर की सामाजिक स्वीकृति होती है।

हालाँकि, भाषावाद, सांप्रदायिकता, सामाजिक असमानताएँ और क्षेत्रीय विषमताएँ कुछ ऐसे कारक हैं, जो भारत में राष्ट्रीय एकीकरण के आदर्श को खतरे में डालते हैं, आइए हम उनमें से प्रत्येक को एक-एक करके देखें।

i) **भाषावाद**: भारत एक बहु-भाषाई राष्ट्र है। भाषा विशेष रूप से स्वतंत्रता के बाद से राजनीतिक अभिव्यक्ति का एक शक्तिशाली स्रोत बन गई है। उदाहरण के लिए, दक्षिण में, विशेष रूप से तमिलनाडु में, राज्य की राजनीति में सत्ता पाने के लिए लोगों के बीच भाषाई भावनाओं का प्रचार किया गया है।

भाषा की समस्या के दो पहलू हैं, अर्थात् (i) स्कूल, कॉलेज और सार्वजनिक सेवा परीक्षाओं के स्तर पर शिक्षा का माध्यम, और (ii) गैर-हिंदी और हिंदी भाषी कट्टरपंथियों की मांगों को पूरा करना।

पहले पहलू पर प्रतिक्रिया देते हुए, भारत सरकार ने तीन-भाषा के फार्मूले को लागू करने का निर्णय लिया। इसमें (क) क्षेत्रीय भाषा, या मातृभाषा को पढ़ाने वाली शामिल होती है जब उत्तरार्द्ध क्षेत्रीय भाषा से अलग होता है, (ख) हिंदी या अन्य भारतीय भाषा बोलने वाले क्षेत्र में और (ग) अंग्रेजी या एक अन्य आधुनिक यूरोपीय भाषा। आज भारत में संघ लोक सेवा आयोग के लिए परीक्षाएं हिंदी या अंग्रेजी या देश की किसी भी क्षेत्रीय भाषा में लिखी जा सकती हैं।

भाषा समस्या के दूसरे पहलू के बारे में, अर्थात्, हिंदी और गैर-हिंदी भाषी कट्टरपंथियों की मांग, भारत सरकार ने राजभाषा (संषोधन) अधिनियम, 1967 पारित किया। इस अधिनियम ने निर्णय लिया कि अंग्रेजी राजभाषा बनी रहेगी सभी गैर-हिंदी भाषी राज्यों केभारतीय संघ के लिए , जब तक कि ये राज्य खुद हिंदी का चयन नहीं करेंगे (किशोर 1987: 41)। इस प्रकार, हिंदी आज केवल भारतीय संघ की आधिकारिक भाषाओं में से एक है। उपर्युक्त अधिनियम त्रि-भाषा के फार्मूले के तहत किए गए प्रावधान ने भाषा के आधार पर संघर्ष की संभावना को कम करने में मदद की है।

ii) **सांप्रदायिकता**: मोटे तौर पर परिभाषित, सांप्रदायिकता किसी भी सामाजिक-धार्मिक समूह की प्रवृत्ति को संदर्भित करता है ताकि अन्य समूहों की कीमत पर अपनी आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक ताकत को अधिकतम किया जा सके। यह प्रवृत्ति धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र के उस राज्य की धारणा के विरुद्ध है जो भारत को पवित्र करता है। भारतीय संदर्भ में धर्मनिरपेक्षता को किसी भी राज्य संरक्षण के बिना सभी धर्मों के शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के रूप में परिभाषित किया गया है। राज्य को उन सभी के साथ समान व्यवहार करना है। फिर भी, भारत जैसे धर्मनिरपेक्ष राज्य में, हम अक्सर सांप्रदायिक संघर्षों के बारे में सुनते, देखते और पढ़ते हैं। लोकतंत्र और समाजवाद के लक्ष्यों के प्रति सचेत प्रयास करते हुए, भारतीय राष्ट्र राज्य सांप्रदायिक झड़पों से मुक्त नहीं हुआ (किशोर 1987: 69)।

सोचिये और करिये

जाति, राजनीति के बारे में अखबारों, पत्रिकाओं, रेडियो और टीवी से आपने जो जानकारी जुटाई है, उसके आधार पर निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान दें।

i) आपके राज्य में प्रमुख राजनीतिक दलों की जाति रचना

ii) पिछले लोकसभा चुनावों में आपके राज्य में जाति कारक की क्या भूमिका थी?

चुनाव प्रचार में उठाए गए मुद्दों के संदर्भ में जाति की भूमिका का वर्णन करें।

iii) **सामाजिक असमानताएं**: प्रत्येक समाज में, सामाजिक स्तरीकरण की एक व्यवस्था है। सामाजिक स्तरीकरण समाज में वस्तुओं, सेवाओं, धन, शक्ति, प्रतिष्ठा, कर्तव्यों, अधिकारों, दायित्वों और विशेषाधिकारों के असमान वितरण पर आधारित असमानता को संदर्भित करता है। उदाहरण के लिए, जाति व्यवस्था द्वारा बनाई गई सामाजिक असमानताएँ। एक वंशानुगत और अंतःसंस्थानिक व्यवस्था होने के नाते, सामाजिक गतिशीलता की गुंजाइश बहुत कम है। सामाजिक विशेषाधिकार और वित्तीय और शैक्षिक लाभ केवल उच्च जाति समूहों के लिए ज़्यादातर सुलभ हैं।परिवर्तन की प्रक्रियाओं, जैसे कि लोकतांत्रीकरण, पश्चिमीकरण और आधुनिकीकरण, ने लोगों की विस्तृत श्रृंखला के लिए विशेषाधिकारों की पहुंच को व्यापक बनाने में मदद की है। आज जाति और राजनीति भी बहुत करीब से जुड़े हुए हैं। शैक्षणिक और व्यावसायिक क्षेत्रों में अपने सदस्यों के लिए सीटें आरक्षित करने के लिए पिछड़ी जातियों के लिए विभिन्न आयोगों का गठन किया गया है। यह जाति से संबद्धता के राजनीतिकरण का प्रतिबिंब है। जबकिअब तक आबादी के शोषित और दबाए गए वर्ग के उत्थान के उपाय आवश्यक हैं, जाति की पहचान पर अधिकता राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया पर विघटनकारी प्रभाव डालती है।

iv) **क्षेत्रीय विषमताएँ**: भारत के विभिन्न क्षेत्रों के असमान विकास ने राष्ट्रीय एकीकरण के चरित्र को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है। स्वतंत्रता के बाद असमान विकास कई सामाजिक आंदोलनों का प्रमुख कारण बन गया है। उदाहरण के लिए, पूर्ववर्ती झारखंड आंदोलन, जिसमें बिहार, मध्य प्रदेश , बंगाल और उड़ीसा के जनजातीय समूह शामिल थे, ने अन्य मुद्दों के बीच क्षेत्र के पिछड़ेपन पर जोर दिया। एक अलग राज्य की मांग करते हुए, इस आंदोलन में शामिल लोगों ने तर्क दिया कि क्षेत्र के समृद्ध प्राकृतिक संसाधनों को दूसरों को लाभ पहुंचाने के लिए बहा दिया गया है। भौतिक अभाव के कथित और/या वास्तविक खतरे से उत्पन्न असंतोष ने लोगों को यह सोचने के लिए प्रेरित किया है कि यदि वे भारतीय संघ का हिस्सा बने रहे तो उनके क्षेत्र का सामाजिक-आर्थिक विकास संभव नहीं है। अंत में राष्ट्रीय सरकार ने एक अलग राज्य की मांग की और झारखंड, उत्तरांचल और छत्तीसगढ़ के तीन नए राज्यों का गठन नवंबर 2000 में किया गया। झारखंड के मामले में बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश और पश्चिम बंगाल के आदिवासी क्षेत्रों से युक्त राज्य की मांग थी।नए राज्य को बिहार राज्य के केवल कुछ हिस्सों में शामिल किया गया था। सामाजिक-आर्थिक विकास के संदर्भ में क्षेत्रीय असमानताएँ कई बार एकजुट राष्ट्र की अवधारणा के लिए खतरा साबित हुई हैं।

अंत में, हम यह कहकर इस खंड को संक्षेप में बता सकते हैं कि विभिन्न ताकत भारत में राष्ट्रीय एकता के लिए एक चुनौती पेश करते हैं। सरकार और राष्ट्र-निर्माण के काम से जुड़े लोगों ने कई रणनीतियों का उपयोग किया है, जैसे कि योजनाबद्ध सामाजिक-आर्थिक विकास और शिक्षा और जन संचार का विस्तार और कई बार राष्ट्रीय एकता की अवधारणा को मजबूत करने और बढ़ावा देने के लिए मौजूदा राज्यों का पुनर्गठन भी।

बोध प्रश्न 5

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दी गई जगह का उपयोग करें

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तरों की जांच करें

1) राष्ट्रीय एकता क्या है? अपने उत्तर के लिए चार पंक्तियों का उपयोग करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारत में राष्ट्रीय एकता के आदर्श को खतरे में डालने वाले कारक कौन से हैं? अपने उत्तर के लिए चार पंक्तियों का उपयोग करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) बताएं कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत। प्रत्येक कथन के विरुद्ध सत्य/असत्य के लिए T या F चिह्न अंकित करें।

क) स्कूल, कॉलेज और सार्वजनिक सेवा परीक्षाओं में शिक्षा के माध्यम की समस्या का जवाब देने के माध्यम से त्रि-भाषा फार्मूला अपनाया गया था।

ख) हिंदी आज भारतीय संघ की एकमात्र आधिकारिक भाषा है।

ग) भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य है।

13.7 सारांश

इस इकाई में हमने राष्ट्रीय राजनीति के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की। पहले हमने राजनीतिक व्यवस्था और इसकी अवधारणा की पहचान की जिसमें हमने सत्ता की धारणा और इसके आयामों पर चर्चा की। हम तब राज्य, राष्ट्र और समाज जैसी अवधारणाओं को परिभाषित करने के लिए आगे बढ़े। भारतीय राष्ट्रीय राजनीति के संदर्भ में हमने संक्षेप में भारतीय राष्ट्र राज्य के उद्भव और राष्ट्रीय स्तर पर अपनाई गई रणनीतियों को एक राष्ट्र राज्य बनाने के बारे में बताया। हमने उन ताकतों को भी देखा, जिन्होंने राष्ट्र-निर्माण के कार्य को चुनौती दी है। हमारे अंतिम खंड में हमने राष्ट्रीय एकता के कार्य से संबंधित मुद्दों को रेखांकित किया, जो हमने कहा, अनिवार्य रूप से एक राष्ट्र राज्य के निर्माण की एक प्रक्रिया है।

13.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Kishore, Satyendra 1987. *National Integration in India.* Sterling Publishers: New Delhi

Kothari, Rajni 1986 *Politics in India.* (First printed in 1970) Orient Longman: New Delhi

Wallace, Paul and Ramashray, Roy (ed.) 2003. *India's 1999 Elections and Twentieth Century Politics.* Sage Publications: New Delhi

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) लोगों की विभिन्न गतिविधियों का समन्वय और हितों के टकराव से निकलने वाले संघर्ष का समाधान सामाजिक संबंधों की व्यवस्थित व्यवस्था के लिए दो आवश्यकताएं हैं।

2) एक राजनीतिक व्यवस्था सत्ता या उसके विभिन्न अभिव्यक्तियों के आसपास आयोजित व्यक्तियों या समूहों के बीच सामाजिक संबंधों की एक व्यवस्था को संदर्भित करती है। अभिव्यक्तियाँ अधिकार, दबाव और ताकत का उल्लेख करती हैं।

3) सत्ता हेतु जो भी प्रभाव वांछित है उसे प्राप्त करने की क्षमता है। इसका तात्पर्य है कि किसी भी व्यक्ति या समूह या संगठन का प्रभाव दूसरों की कार्रवाई पर पड़ता है। अधिकार सत्ता का वैधीकरण है। दोनों अवधारणाओं का उपयोग राजनीति के संदर्भ में किया जाता है।

4) राजनीति का एक प्रतिबंधित दृष्टिकोण उन व्यक्तियों के संगठन के लिए राजनीतिक संबंधों की परिभाषा को परिभाषित करता है जो एक विशेष क्षेत्र में रहते हैं। यह संगठन भी शारीरिक बल के अनुमोदन पर आधारित है। यह प्रतिबंधित दृष्टिकोण ऐसे राजनीतिक संबंधों पर ध्यान देने में विफल है, जो क्षेत्रीय रूप से परिभाषित नहीं हैं।

बोध प्रश्न 2

1) समाज का तात्पर्य उन सामाजिक रिश्तों से है जो परस्पर जुड़े हुए हैं। यह सामाजिक संगठन की एक श्रेणी भी है, जिसमें बड़ी संख्या में सामाजिक संस्थाएं जैसे कि नातेदारी, परिवार, अर्थव्यवस्था, राजनीति और समुदाय और एसोसिएशन शामिल हैं।

2) एक राष्ट्र उन लोगों के समूहों को संदर्भित करता है जिन्होंने संस्कृति, धर्म, भाषा और राज्य की सामान्य पहचान के आधार पर एकजुटता विकसित की है।

3) एक राज्य एक राजनीतिक संघ को संदर्भित करता है, जो क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र, गैर-स्वैच्छिक सदस्यता और एक संविधान द्वारा विशेषता है। यह अपने सदस्यों पर सत्ता की वैधता का दावा भी करता है।

बोध प्रश्न 3

1) भारतीय राष्ट्रवाद के उद्भव को सुविधाजनक बनाने वाले दो कारक हैं (क) एक साझा दुश्मन की मौजूदगी (ख) एकता की सांस्कृतिक पहचान का अस्तित्व जिसने भारत के एकीकरण को एक राज्य के रूप में रखा।

2) एक संविधान को अपनाने और समाज के एक समाजवादी पैटर्न ने राष्ट्र स्तर पर प्रमुख प्रयासों का गठन राजनीतिक स्तर पर किया।

3) क) एफ

   ख) टी

   ग) टी

   घ) एफ

बोध प्रश्न 4

1) पंचवर्षीय योजनाएं राष्ट्र-निर्माण के लिए आर्थिक स्तर पर एक महत्वपूर्ण रणनीति बनाती हैं। योजना आयोग को यह तय करने की जिम्मेदारी दी जाती है कि प्रत्येक राज्य को किन क्षेत्रों में कितनी और किन परियोजनाओं का आवंटन करना है। वितरणात्मक न्याय का सिद्धांत वस्तुओं और सेवाओं के वितरण का मार्गदर्शन करता है।

2) संघटकों की विविधता के तीन प्रमुख ताकतें हैं, क्षेत्रीय और सांस्कृतिक पहचान और जातिवाद।

3) क) टी

ख) एफ

ग) टी

बोध प्रश्न 5

1) राष्ट्रीय एकता एक राष्ट्रीय सामाजिक व्यवस्था के विभिन्न और विविध तत्वों को एक पूर्ण में एकीकृत करने की एक प्रक्रिया है।

2) भारत में राष्ट्रीय एकता के आदर्श को खतरे में डालने वाले कारक, भाषावाद, सांप्रदायिकता, सामाजिक असमानताएँ और क्षेत्रीय विषमताएँ हैं।

3) क) टी

ख) एफ

ग) टी